श्रीमद्भागवतम्

स्कन्ध 2

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 9

श्रीभगवान् के वचन का उद्धरण देते हुए प्रश्नों के उत्तर

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1: श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा—हे राजन्, जब तक मनुष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की शक्ति से प्रभावित नहीं होता तब तक भौतिक शरीर के साथ शुद्ध चेतना में शुद्ध आत्मा के सम्बन्ध कोई अर्थ नहीं होता। ऐसा सम्बन्ध स्वप्न देखने वाले द्वारा अपने ही शरीर को कार्य करते हुए देखने के समान है।

श्लोक 2: मोहग्रस्त जीवात्मा भगवान् की बहिरंगा शक्ति के द्वारा प्रदत्त अनेक रूप धारण करता है। जब बद्ध जीवात्मा भौतिक प्रकृति के गुणों में रम जाता है, तो वह भूल से सोचने लगता है कि यह "मैं हूँ" और यह "मेरा" है।

श्लोक 3: जैसे ही जीवात्मा अपनी स्वाभाविक महिमा में स्थित हो जाता है और काल तथा माया से गुणातीत हो जाता है, वैसे ही वह जीवन की दोनों भ्रान्त धारणाओं (मैं

तथा मेरा) को त्याग देता है और शुद्ध आत्मस्वरूप में प्रकट हो जाता है।

श्लोक 4: हे राजन्, भगवान् ने ब्रह्माजी की भक्तियोग की निष्कपट तपस्या से अत्यन्त प्रसन्न होकर उनके समक्ष अपना शाश्वत दिव्य रूप प्रकट किया और बद्धजीव की शुद्धि के लिए यही परम लक्ष्य भी है।

श्लोक 5: प्रथम गुरु एवं ब्रह्माण्ड के सर्वश्रेष्ठ जीव होते हुए भी ब्रह्माजी अपने कमल आसन के स्रोत का पता न लगा सके और जब उन्होंने भौतिक जगत की सृष्टि करनी चाही तो वे यह

भी न जान पाये कि किस दिशा से यह कार्य प्रारम्भ किया जाय, न ही ऐसी सृष्टि करने के लिए कोई विधि ही ढूँढ पाये।

श्लोक 6: इस प्रकार जब जल में स्थित ब्रह्माजी सोच रहे थे तब पास ही उन्होंने परस्पर जुड़े हुए दो शब्द दो बार सुने। इनमें से एक सोलहवाँ और दूसरा इक्कीसवाँ स्पर्श अक्षर था। ये दोनों मिलकर विरक्त जीवन की निधि बन गए।

श्लोक 7: जब उन्होंने वह ध्वनि सुनी तो वे ध्वनिकर्ता को चारों ओर

ढूँढऩे का प्रयत्न करने लगे। किन्तु जब वे अपने अतिरिक्त किसी को न पा सके, तो उन्होंने कमल-आसन पर दृढ़तापूर्वक बैठ जाना और आदेशानुसार तपस्या करने में ध्यान देना ही श्रेयस्कर समझा।

श्लोक 8: ब्रह्माजी ने देवताओं की गणना के अनुसार एक हजार वर्षों तक तपस्या की। उन्होंने आकाश से यह दिव्य अनुगूँज सुनी और इसे ईश्वरीय मान लिया। इस प्रकार उन्होंने अपनी इन्द्रियों तथा मन को वश में किया। उन्होंने जो तपस्या की, वह

जीवात्माओं के लिए महान् शिक्षा बन गई। इस प्रकार ब्रह्मा जी तपस्वियों में महानतम माने जाते हैं।

श्लोक 9: श्री भगवान् ने ब्रह्माजी की तपस्या से अत्यधिक प्रसन्न होकर उन्हें समस्त लोकों में श्रेष्ठ अपने निजी धाम, वैकुण्ठ लोक, को दिखलाया। यह दिव्य लोक उन समस्त स्वरूपसिद्ध व्यक्तियों द्वारा पूजित है, जो समस्त प्रकार के क्लेशों तथा सांसारिक भय से सर्वथा मुक्त हैं।

श्लोक 10: भगवान् के उस स्वधाम में न तो रजोगुण और तमोगुण

रहते हैं, न ही सतोगुण पर इनका कोई प्रभाव दिखता है। वहाँ पर काल को प्रधानता प्राप्त नहीं है। फिर बहिरंगा शक्ति (माया) का तो कहना ही क्या? इसका तो वहाँ प्रवेश भी नहीं हो सकता। देवता तथा असुर, बिना भेदभाव के, भक्तों के रूप में भगवान् की पूजा करते हैं।

श्लोक 11: वैकुण्ठ लोक के वासियों को आभामय श्यामवर्ण का बताया गया है। उनकी आँखें कमल-पुष्प के समान, उनके वस्त्र पीलाभ रंग के और उनकी शारीरिक संरचना

अत्यन्त आकर्षक है। वे उभरते हुए तरुणों की तरह हैं, उन सबके चार-चार हाथ हैं। वे मोती के हारों तथा अलंकृत पदकों से भली-भाँति विभूषित होकर अत्यन्त तेजवान् प्रतीत होते हैं।

श्लोक 12: उनमें से कुछ की आकृतियाँ मूँगे तथा हीरे की भाँति तेजस्वी हैं और वे अपने सिरों पर मालाएँ धारण किए हैं, जो कमल-पुष्प के समान खिली हुई हैं। कुछ ने कानों में कुण्डल पहन रखे हैं।

श्लोक 13: सारे वैकुण्ठ लोक विभिन्न चमचमाते विमानों से भी घिरे हैं। ये विमान महात्माओं या भगवद्भक्तों के हैं। स्त्रियाँ अपने स्वर्गिक मुखमण्डल के कारण बिजली के समान सुन्दर लगती हैं और ये सब मिलकर ऐसी प्रतीत होती हैं मानो बादलों तथा बिजली से आकाश सुशोभित हो।

श्लोक 14: दिव्य रूपधारी लक्ष्मीजी भगवान् के चरणकमलों की प्रेमपूर्ण सेवा में लगी हुई हैं और वसन्त के अनुचर भौरों के द्वारा

विचलित होकर, वे न केवल विविध विलास—अपनी सहेलियों सहित भगवान् की सेवा—में तत्पर हैं, अपितु भगवान् की लीलाओं का गुणगान भी कर रही हैं।

श्लोक 15: ब्रह्माजी ने वैकुण्ठ लोक में उन श्रीभगवान् को देखा जो सारे भक्त समुदाय के स्वामी, लक्ष्मीजी के पति, समस्त यज्ञों के स्वामी तथा ब्रह्माण्ड के स्वामी हैं और जो नन्द, सुनन्द, प्रबल तथा अर्हण आदि अपने अग्रणी पार्षदों द्वारा सेवित हैं।

श्लोक 16: अपने प्रिय दासों की ओर कृपा दृष्टि डालते हुए, मादक तथा आकर्षक दृष्टि वाले भगवान् अत्यधिक तुष्ट लगे। उनका मुस्काता मुख मोहक लाल रंग से सुशोभित था। वे पीले वस्त्र पहने थे और कानों में कुण्डल तथा सिर में मुकुट धारण किये हुए थे। उनके चार हाथ थे और उनका वक्षस्थल लक्ष्मीजी की रेखाकृतियों से चिह्नित था।

श्लोक 17: भगवान् अपने सिंहासन पर विराजमान थे और विभिन्न शक्तियों से—यथा चार,

सोलह, पाँच तथा छ: प्राकृतिक ऐश्वर्यों के साथ अन्य छोटी एवं क्षणिक शक्तियों से घिरे हुए थे। किन्तु वे वास्तविक परमेश्वर थे और अपने धाम में आनन्द ले रहे थे।

श्लोक 18: इस तरह भगवान् को उनके पूर्ण रूप में देखकर ब्रह्माजी का हृदय आनन्द से आप्लावित हो उठा और दिव्य प्रेम तथा आनन्द से उनके नेत्रों में प्रेमाश्रु आ गये। वे भगवान् के समक्ष नतमस्तक हो गये। जीव (परमहंस) के लिए परम सिद्धि की यही विधि है।

श्लोक 19: भगवान् ने ब्रह्माजी को अपने समक्ष देखकर उन्हें जीवों की सृष्टि करने तथा जीवों को अपनी इच्छानुसार नियन्त्रित करने के लिए उपुयक्त (पात्र) समझा। इस प्रकार प्रसन्न होकर भगवान् ने ब्रह्मा से मंद-मंद हँसते हुए हाथ मिलाया और उन्हें इस प्रकार से सम्बोधित किया।

श्लोक 20: परम सुन्दर भगवान् ने ब्रह्मा को सम्बोधित किया—हे वेदों से संपृक्त ब्रह्मा, सृष्टि की इच्छा से की गई तुम्हारी दीर्घकालीन तपस्या से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। मैं छद्मयोगियों से

बहुत ही मुश्किल से प्रसन्न हो पाता हूँ।

श्लोक 21: तुम्हारा कल्याण हो। हे ब्रह्मा, तुम मुझसे जो चाहो माँग सकते हो, क्योंकि मैं समस्त वरों का वरदाता हूँ; तुम्हें ज्ञात हो कि सारी तपस्या के फलस्वरूप जो अन्तिम वर प्राप्त होता है, वह मेरा दर्शन है।

श्लोक 22: सर्वोच्च सिद्धिमयी पटुता है मेरे धाम का साक्षात् दर्शन और यह दर्शन तुम्हें मेरे आदेश के अनुसार कठिन तपस्या के प्रति

तुम्हारी विनम्र प्रवृत्ति के कारण सम्भव हो सका है।

श्लोक 23: हे निष्पाप ब्रह्मा, तुम्हें ज्ञात हो कि जब तुम अपने कर्तव्य के प्रति असमंजस में थे तो सबसे पहले मैंने ही तुम्हें तपस्या करने का आदेश दिया था। ऐसी तपस्या ही मेरा हृदय और मेरी आत्मा है, अत: तपस्या मुझसे अभिन्न है।

श्लोक 24: मैं ऐसे ही तप से इस विश्व की रचना करता हूँ, इसी शक्ति से इसका पालन करता हूँ और इसीसे

इसको अपने में लीन करता हूँ। अत: तप ही वास्तविक शक्ति है।

श्लोक 25: ब्रह्माजी ने कहा, हे भगवान्, आप प्रत्येक जीवात्मा के हृदय में परम नियन्ता के रूप में स्थित हैं, अत: आप किसी भी प्रकार की बाधा के बिना अपने अन्त:-ज्ञान (प्रज्ञा) द्वारा समस्त प्रयासों से अवगत हैं।

श्लोक 26: तथापि हे भगवान्, मेरी आपसे प्रार्थना है कि मेरी इच्छा पूरी करें। कृपया मुझे बताएँ कि दिव्य रूप के होते हुए भी आप संसारी रूप

किस प्रकार धारण करते हैं, यद्यपि आपका ऐसा कोई रूप नहीं होता।

श्लोक 27: तथा कृपा करके मुझे यह भी बताएँ कि आप अपने से किस प्रकार से विभिन्न संयोगों के द्वारा संहार, उत्पत्ति, स्वीकृति तथा पालन की विविध शक्तियों को प्रकट करते हैं।

श्लोक 28: हे माधव, मुझे उन सबके विषय में दार्शनिक विधि से बताएँ। आप मकड़ी के समान खेल करने वाले हैं, जो अपनी ही शक्ति से अपने को ढक लेती है। आपका संकल्प अचूक है।

श्लोक 29: कृपा करके मुझे बतलाएँ जिससे आपकी आज्ञानुसार मैं इस विषय की शिक्षा प्राप्त कर सकूँ और इस तरह ऐसे कार्यों से आबद्ध हुए बिना जीवात्माओं को यंत्रवत् उत्पन्न करने का कार्य करता रहूँ।

श्लोक 30: हे अजन्मा भगवान्, आपने मुझसे उसी प्रकार हाथ मिलाया है, जिस प्रकार कोई मित्र अपने मित्र से मिलाता है (मानो पद में समान हो)। अब मैं विभिन्न जीवात्माओं की सृष्टि करने में लगूँगा और आपकी सेवा करता रहूँगा। मैं

किसी तरह विचलित नहीं होऊँगा। किन्तु मेरी प्रार्थना है कि कहीं इन सबसे मुझे गर्व न हो जाय कि मैं ही परमेश्वर हूँ।

श्लोक 31: श्रीभगवान् ने कहा— शास्त्रों में वर्णित मुझसे सम्बन्धित ज्ञान अत्यन्त गोपनीय है उसे भक्ति के समन्वय द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इस विधि के लिए आवश्यक सामग्री की व्याख्या मेरे द्वारा की जा चुकी है। तुम इसे ध्यानपूर्वक ग्रहण करो।

श्लोक 32: मेरी अहैतुकी कृपा से तुम्हारे अन्त:करण में उदय होने वाले वास्तविक बोध से तुम्हें मेरे विषय में सब कुछ—मेरा वास्तविक शाश्वत रूप तथा मेरा दिव्य अस्तित्व, रंग, गुण तथा कार्य—ज्ञात हो सकेगा।

श्लोक 33: हे ब्रह्मा, वह मैं ही हूँ जो सृष्टि के पूर्व विद्यमान था, जब मेरे अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। तब इस सृष्टि की कारणस्वरूपा भौतिक प्रकृति भी नहीं थी। जिसे तुम अब देख रहे हो, वह भी मैं ही हूँ और

प्रलय के बाद जो शेष रहेगा वह भी मैं ही हूँ।

श्लोक 34: हे ब्रह्मा, जो भी सारयुक्त प्रतीत होता है, यदि वह मुझसे सम्बन्धित नहीं है, तो उसमें कोई वास्तविकता नहीं है। इसे मेरी माया जानो, इसे ऐसा प्रतिबिम्ब मानो जो अन्धकार में प्रकट होता है।

श्लोक 35: हे ब्रह्मा, तुम यह जान लो कि ब्रह्माण्ड के सारे तत्त्व विश्व में प्रवेश करते हुए भी प्रवेश नहीं करते हैं। उसी प्रकार मैं उत्पन्न की गई प्रत्येक वस्तु में स्थित रहते हुए भी

साथ ही साथ प्रत्येक वस्तु से पृथक् रहता हूँ।

श्लोक 36: जो व्यक्ति परम सत्य रूप श्रीभगवान् की खोज में लगा हो उसे चाहिए कि वह समस्त परिस्थितियों में सर्वत्र और सर्वदा प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों ही प्रकार से इसकी खोज करे।

श्लोक 37: हे ब्रह्मा, तुम मन को एकाग्र करके इस निर्णय का पालन करो। तुम्हें, न तो आंशिक और न ही पूर्ण प्रलय के समय किसी प्रकार का गर्व विचलित कर सकेगा।

श्लोक 38: शुकदेव गोस्वामी ने महाराज परीक्षित से कहा— जीवात्माओं के नायक ब्रह्मा को अपने दिव्य रूप में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हरि इस प्रकार उपदेश देते दिखे और फिर अन्तर्धान हो गये।

श्लोक 39: भक्तों की इन्द्रियों को दिव्य आनन्द प्रदान करने वाले पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हरि के अन्तर्धान हो जाने पर ब्रह्माजी हाथ जोड़े हुए ब्रह्माण्ड की जीवात्माओं से पूर्ण वैसी ही सृष्टि पुन: करने लगे जिस प्रकार वह इसके पूर्व थी।

श्लोक 40: एक बार जीवों के पूर्वज तथा धर्म के पिता ब्रह्माजी ने समस्त जीवात्माओं के कल्याण में ही अपना हित समझते हुए विधिपूर्वक यम-नियमों को धारण किया।

श्लोक 41: ब्रह्मा के उत्तराधिकारी पुत्रों में सर्वाधिक प्रिय नारद अपने पिता की सेवा के लिए सदैव तत्पर रहते हैं और अपने पिता के उपदेशों का अत्यन्त संयम, विनय तथा सौम्यता से पालन करते हैं।

श्लोक 42: हे राजन्, नारद ने अपने पिता को अत्यधिक प्रसन्न कर

लिया और समस्त शक्तियों के स्वामी विष्णु की शक्तियों के विषय में जानने की इच्छा प्रकट की, क्योंकि नारद समस्त ऋषियों तथा समस्त भक्तों में सर्वोपरि हैं।

श्लोक 43: जब नारद ने देखा कि समस्त ब्रह्माण्ड के प्रपितामह ब्रह्माजी मुझ पर प्रसन्न हैं, तो महर्षि नारद ने अपने पिता से विस्तार में भी पूछा।

श्लोक 44: तब जाकर पिता (ब्रह्मा) ने अपने पुत्र नारद को श्रीमद्भागवत नामक उपवेद पुराण कह

सुनाया जिसका वर्णन श्रीभगवान् ने उनसे किया था और जो दस लक्षणों से युक्त है।

श्लोक 45: हे राजन्, उसी परम्परा में नारद मुनि ने श्रीमद्भागवत का उपदेश अनन्त शक्तिमान उन व्यासदेव को दिया जो सरस्वती नदी के तट पर भक्ति में स्थित होकर परम सत्य, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का ध्यान कर रहे थे।

श्लोक 46: हे राजन्, तुम्हारे इस प्रश्न का कि यह ब्रह्माण्ड भगवान् के विराट रूप से किस प्रकार प्रकट हुआ

तथा अन्य प्रश्नों का उत्तर मैं पूर्वोक्त चारों श्लोकों की व्याख्या के रूप में विस्तारपूर्वक दूँगा।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव